॥ श्री वीतरागायनम ॥

प्रश्नोत्तर रत्नमाला।

ट्रैक्ट न० ५७

अनुवादक—

पं० ब्रह्मदत्त शर्म्मा।

प्रकाशक—

श्री आत्मानन्द जैन ट्रैक्ट-सोसायटी,

अम्बाला शहर।

वीर संवत् २४४८
विक्रम संवत् १९७९
प्रथमवार १०००]

आत्म संवत् २७
ईस्वी सन् १९२२
[मूल्य ~)॥

मुद्रक —मोहनलाल बैद,
सरस्वती प्रिंन्टिंग प्रेस, बेलनगञ्ज-आगरा।

वक्तव्य।



प्राचीन आचार्यों की लेख पद्धति अनोखी थी, वह सरल, सुश्लिष्टरूप में गाम्भीर्यार्थ से परिष्कृत होती थी, उसमें अधिकतर अपने पाण्डित्य को प्रकट करने के लिये शब्दजाल प्रयुक्त न किये जाते थे। आचार्यों के मनोगत भाव ये न थे कि वे अपने पाण्डित्य को प्रकट करने के लिये वे ग्रन्थ का निर्माण करना अपना कर्त्तव्य समझें, या उस द्वारा दिगन्तव्यापिनी कीर्त्ति ही लाभ करने की कोशिश में हों। नहीं २ *महान्त उपकारिण* —(महान् आत्मा उपकारी होते हैं)

यह जो ट्रैक्ट आप लोगों के करकमलों में है एक महान् त्यागी आत्मा द्वारा निर्मित हुआ है, निर्माता का नाम "विमल" था। यह नाम त्यागावस्था का है, पूर्वाश्रम (गृहस्थ) में इनका नाम था "राजा अमोघवर्ष"। जैसा कि पुस्तका-न्तर में प्रकाशित निम्नलिखित पद्य से मालूम होता है —

विवेकात्त्यक्त राज्येन राज्ञेयं रत्न मालिका ।
रचिताऽमोघवर्षेण सुधिया सदलंकृति ॥

इस पद्य का अर्थ यह है कि–सत् असत् के ज्ञान होने के कारण समस्त राज्य को जलाञ्जलि देनेवाले (त्यागी) बुद्धिमान् राजा अमोघ वर्षने यह 'रत्नमाला' पुस्तक बनाई, जो कि अलंकारों से अलंकृत है।

महानुभाव ! यहां हम यह न बताकर कि किस पद्य में कौन अलंकार है, यही कहेंगे कि एक त्यागी के अनुभूत वचनों को ग्रहण कर आत्मिक उन्नति करना सर्वसाधारण का कर्त्तव्य है ।

इस पुस्तक का अनुवाद बहुत ही सरल भाषा में है, इस के अतिरिक्त भावार्थ लिखना तथा उसी अर्थ को विशद करने के लिये ग्रन्थान्तरों के जो कि प्रायः लोक प्रचलित सुवाच्य एवं मनोहर हिन्दी पद्य तथा संस्कृत पद्य हैं उनका लिखना उपयुक्त समझ, ग्रन्थ की शोभा बढाने में प्रयत्न किया गया है, कठिन संस्कृत पदों के सरल अर्थ भी लिख दिये हैं, आशा है, कि पाठकगण इसे ध्यानपूर्वक पढ सानन्दित होंगे।

अनुवादक।

नमो वीतरागाय।

प्रश्नोत्तर रत्नमाला।

प्रणिपत्य वर्धमानं प्रश्नोत्तर रत्नमालिका वक्ष्ये।
नागनरामरवन्द्यं देवं देवाधिप वीरम् ॥ १ ॥

अर्थ—भगवान् शेषनाग तथा मनुष्य और देवताओं से वन्दित देवाधिदेव वर्धमान* (महावीर स्वामी) को वन्दना कर "प्रश्नोत्तर रत्नमाला" नामक ग्रन्थ को बनाता हूं।

कःखलु नालंक्रियते—दृष्टादृष्टार्थसाधन पटीयान्।
कण्ठस्थितया विमल प्रश्नोत्तर रत्नमालिकया॥२॥

प्रश्न—कौन पुरुष शोभित होता है ?

उत्तर—जो विमल मुनि निर्मित (बनाई हुई) "प्रश्नोत्तर रत्नमाला" पुस्तक को याद करके (दृष्ट) अनुभूत (अदृष्ट) अननुभूत अर्थ के सिद्ध करने में कुशल है।

* श्री महावीर स्वामी के नामों में से "वर्धमान" भी एक उनका नाम है।

भावार्थ—जो पुरुष देखे हुए य' न देखे हुए पदार्थ की वास्तविक्ता (असलियत) को जानता है वही इस जगत में शोभित होता है, अर्थात् कितने ही पदार्थ ऐसे हैं जिनको मनुष्य नहीं जानता जैसे—"नरक क्या वस्तु है"? इत्यादि विषयों के बतलाने ही के लिये यह पुस्तक है जिससे मनुष्य भली भांति गूढ विषयों से परिचित हो जाय इस ग्रन्थ के लिखने का यही मुख्य प्रयोजन है।

भगवन्! किमुपादेय गुरुवचन—
हेयमपिच किमकार्यम्।
कोगुर रधिगततत्त्व सत्त्वहिता—
भ्युद्यत सततम् ॥ ३ ॥

शरण में आया हुआ शिष्य (भक्त) भगवान् (गुरु) से पूछता है—

प्र०—भगवन्! क्या वस्तु उपादेय (ग्रहण करने योग्य) है?

उ०—गुरु (देव) के वचन।

प्र०—किस का त्याग करना चाहिये?

उ०—जो सेवनीय नहीं।

3 प्र०—गुरु कौन है ?

उ०—जो कि तत्त्वज्ञ (बुरे भले को पहिचान करने वाला) है और जो प्राणियों के हित करने ही में सदा तत्पर रहता है।

त्वरित किं कर्त्तव्य विदुषा ससार सन्ततिच्छेद. ।
किंमोक्षतरोर्बीज सम्यग्ज्ञानाक्रिया सहितम् ॥४॥

प्र०—विद्वानों को जल्दी से क्या काम करना चाहिये ?

उ०—ससार में आने जाने से छूटने का उपाय।

प्र०—मोक्षरूप वृक्ष का बीज क्या है ?

उ०—क्रिया सहित "सम्यग्ज्ञान" हो जाना।

भावार्थ—विद्वानों का कर्त्तव्य है कि ससार चक्र से छूटने का उपाय करें। जिस मनुष्य के हृदय में क्रिया सहित सम्यक्-ज्ञान रूप बीज बोया गया है उस जान लो कि वह मोक्षरूप वृक्ष के फलों को खाकर सुखी होगा।

वक्तव्य—इस श्लोक में "क्रिया सहित सम्यक् ज्ञान" होने से ही मोक्ष प्राप्ति होना बतलाया है कारण कि—बड़े २ वेदान्त के ग्रन्थों को पढ़कर मनुष्य वास्तविकता को तो जान लेते हैं किन्तु उस पर "अमल" नहीं करते, इसी का नाम है —

मनस्यन्यत् वचस्यन्यत्।

अर्थात् मन में कुछ और, वाणी में कुछ और।

कोई कथावाचक अपनी कथा में तो यह उपदेश देता है कि "*अच्छेद्योऽय मदाह्योऽयम्*" यह आत्मा न कट सकता न जल सकता है और अवसर प्राप्त होने पर सदा दूर। ऐसे पुरुषों को सम्यक्ज्ञानीतो कह सकते हैं किन्तु "क्रियानिष्ठ" नहीं। कहा भी है—

शास्त्राण्य धीत्यापि भवन्ति मूर्खा।

शास्त्रों को पढ़कर भी मूर्ख होते हैं अर्थात् यह नहीं कि शास्त्रज्ञ पुरुषों के लिये स्वर्ग का दरवाजा खुला है और मूर्खों के लिये बन्द। नहीं २ क्रिया के ऊपर निर्भर है, जो पुरुष "कर्त्तव्य परायण" होगा, वही मोक्ष सुख को प्राप्त करेगा। शास्त्र तो केवल पथ प्रदर्शक मात्र (रास्ते के बतलाने वाले) हैं। पाठक की इच्छा जो करे। कार्य करने में जीव स्वतन्त्र है और भोगने में परतन्त्र।

किं पथ्यदन धर्म, क. शुचिरिह,
यस्य मानस शुद्धम्।
क॰ पण्डितो विवेकी, किं विषमव—
धीरिता गुरव ॥५॥

६ प्र०—रास्ते में क्या खाना चाहिये ?

उ०—धर्म ।

७ प्र०—शुद्ध कौन है ?

उ०—जिसका मन शुद्ध है ।

८ प्र०—पण्डित कौन है ?

उ०—जो (सत्) भला (असत्) बुरे को पहिचानता है ।

९ प्र०—विष क्या है ?

उ०—मूर्ख गुरु ।

वक्तव्य—

पथ्यदनम्—पथि—मार्ग में । अदनम्—खाना ।

मार्ग में क्या खाना चाहिये ? यह प्रश्न जिज्ञासु को इस लिये उठा है कि शास्त्रकार चलते हुए खाने का निषेध करते हैं।

एक समय राजा भोज की सभा में कालिदास कवि ने आकर राजा को प्रणाम (वन्दना) की, राजा ने कहा [illegible] ! यह सुन कालिदास ने यह पद्य पढा—

खादन्न गच्छामि हसन्न जल्पे—
गतन्न शोचामि कृतन्न मन्ये ।

द्वाभ्या तृतीयो न भवामि राजन् !
केनास्मि मूर्खो वद ! कारणेन ॥

अर्थ–मैं खाते हुए कभी नहीं चलता, अर्थात् चलते हुए खाता नहीं। बोलते समय हसता नहीं, व्यतीत बात को सोचता नहीं। किये हुए काम को मानता नहीं अर्थात् किसी काम का करके यह नहीं कहता कि यह काम मैंने किया या यों कहो कि 'मियाँ मिट्ठू नहीं बनता'। और जहा दो मनुष्य परस्पर बात् चीत कर रहे हों मैं वहा नहीं जाता फिर बतलाओ मैं क्यों मूर्ख हू। बिना बुलाये किसी की गोष्ठी म दखल देना यह भी मूर्खता का चिह्न है।

अनाहूत प्रविशति'

बिना बुलाए जा दखल देता है, अर्थात् 'खामुख्वाह' अस्तु।

इस कथन से हम यही ग्रहण करना है कि शास्त्रों म चलते हुए माग मे उपभोग (खाना) निषिद्ध है फिर भी क्या खाना चाहिये ? अर्थात् किसका उपभोग करना चाहिये। उत्तर है–धर्म का।

माग में चलते हुए कितने ही जीवों के प्राण जाने की आशका है इसलिये–

"दृष्टि पूत न्यसेत्पादम्"

रास्ते में मनुष्य का नीचे देख भालकर चलना चाहिये
ने कीड़ी आदि जीवों की मौत न हो।

* पण्डित वही है जो विवेकी है अर्थात् झूठ सच को
ता है।

यह नहीं कि रोटी पकाने वाला पण्डित, पानी भरने
। पण्डित, बोझा उठाने वाला पण्डित।

यह तो शब्दार्थ अब लक्षण सुनिये—

आत्मज्ञान समारम्भास्तितिक्षा धर्मनित्यता
यमर्था नाप कर्षन्ति सवै पण्डित उच्यते।
निषेवते प्रशस्तानि, निन्दितानिन सेवते।
अनास्तिक श्रद्धान एतत्पण्डित लक्षणम्।

अर्थ—जो आत्मज्ञानी, उद्योगी, सहनशील तथा धार्मिक
और जिसको सासारिक रगडे झगडे अपनी तर्फ न खींचते
वही पण्डित है।

---

* पण्डा—सत् असत् विवेकिनी बुद्धि, सा ऽस्येति। यह शब्दार्थ
रा।

जो भेदापरता का सेवन करता है निन्दित करतों क नहीं, और जो नास्तिक नहीं अथात् जिसे ईश्वर पर विश्व है, जो परलोक को मानता है, जिसकी धर्म पर ईश्वर पर श्रद्धा है वही पण्डित है—

इत्यादि जिसमें गुण हो उसे पण्डित जानना ।

वास्तविक शुद्धता नाम है—मानसिक शुद्धि का स्नान जो है वे यह शुद्धि क अन्तर्गत हैं । जल से शारीरिक शुद्धि हो सकती है आत्मिक नहीं ।

न्हाये धोये क्या भया, मन में मैल समाय ।
मीन सदा जल में रहे धोये बास न जाय ॥
अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति ।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति ॥

अर्थ—जल से शरीर, सत्य से मन, विद्या और तप से अन्तरात्मा तथा ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होता है ।

एतत्कथनानुसार यह मानना पड़ता है कि अन्तरात्मा की शुद्धि ही वास्तविक शुद्धि है और वह विद्या या तपोऽनुष्ठान से होगी ।

आत्मानदी संयम पुण्यतीर्था सत्योदका शीलतटादयोर्मि ।
तत्राभिषेकं कुरुपाण्डुपुत्र नवारिणा शुध्यति चान्तरात्मा ॥

हे युधिष्ठिर ! आत्मा–एक नदी है, संयम * ही पवित्र तीर्थ है। सत्य–जल है,–शील–किनारा है ? दया–लहर है। ऐसी नदी में तू स्नान कर, सिर्फ पानी में डुबकी लगाने से तेरा अन्तरात्मा शुद्ध नहीं हो सकता, यह है वास्तविक शुद्धि। जिस मनुष्यने मूर्ख मनुष्यों को गुरु बनालिया उसकी तो अवश्य मौत होगी क्योंकि मूर्ख गुरु विष के समान है और विष से मनुष्य की मृत्यु होती है। जो स्वयं अन्धा है वह किसी को क्या मार्ग दिखावेगा ? होगा यही कि—

† यादृशी शीतला देवी तादृशो वाहनः खरः ।

जैसी देवी शीतला ऐसे ही उसका वाहन गधा, जो दशा गुरु की होगी वही शिष्य की।

जस गुरू हैं तस चेला
एक नाव में ठेलम् ठेला।

किं संसारे सारं बहुशोऽपि विचिन्त्य मानमिदमेव।
मनुजेषु दृष्टतत्त्वं स्वपरहिताय यो द्यत जन्म॥ ६॥

---

* (अहिंसा) किसी को न सताना, सत्य, चोरी न करना, ब्रह्मचर्यावस्था में रहना, (परिग्रह) लालच न करना। ये यम हैं।

† शीतला–एक देवी है जो कि गधे की सवारी करती है।

प्र०—संसार में सार (असलियत) क्या है?

उ०—मनुष्यों में तत्त्वज्ञ होना, और आत्मोन्नति तथा परोपकार करना इन्हीं दो को बहुत मनुष्यों ने सिद्धान्त (ठीक) बताया है।

परोपकरण कायात् असारात् सारमाहरेत्।

इस असार शरीर से परोपकार रूप सार लेना चाहिये अन्यथा यह किस काम में आवेगा? आज कल धनिकों के समान यह नहीं कहना चाहिये। यथा—

तुम मर रहे तो मरो तुमसे हमें क्या ! काम है।
हम पर सकल सुख सम्पदा है नाम है, सुख धाम है॥
तुम कौन हो ? जिनके लिये हमको यहां अवकाश हो।
सुख भोगते हैं हम, हमें क्या जो किसी का नाश हो॥

मदिरेव मोहजनक क स्नेहः—
केच दस्यवो विषयाः।
का भववल्ली तृष्णा को वैरी,
नन्वनुद्योग ॥ ७ ॥

प्र०—शराब के समान कौन बेहोश करता है?
उ—स्नेह।

प्र०—डाकू कौन है ?

उ०—*विषय।

प्र०—संसार की बेल क्या है ?

उ०—तृष्णा।

प्र०—शत्रु कौन है ?

उ०—आलस्य।

कस्माद्भय मिहमरणादपि कोविशिष्यते रागी।
क: शूरो यो ललना लोचन कटाक्षैर्नव्यथित. ॥८॥

प्र०—संसार में भय किस से लगता है।

उ०—मरने से।

प्र०—अन्ध से भी बड़ा अन्धा कौन है ?

उ०—रागी।

प्र०—बलवान कौन है ?

उ०—जो स्त्रियों के लोचन (आंख) रूप बाणों से घायल नहीं हुआ।

पातु कर्णाञ्जलिभि किममृतमिव बुध्यते सदुपदेश:।
किं गुरुताया मूल यदेतद् प्रार्थनं नाम ॥ ९ ॥

---

* काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, मत्सरता।

१६ प्र०—कान रूप अञ्जली से अमृत के समान क्या पीना चाहिये ?

उ०—सदुपदेश।

१८ प्र०—गुरुता का मूल क्या है ?

उ०—न माँगना।

मनुष्य की गुरुता (बड़प्पन) का मूल न माँगना है।

जावित ही वे मर चुके जो माँगन को जाँहि।
उनसे पहले वे मरे जिन मुख निकसत नाहि॥
मांगन मरण समान है मति मांगो कोइ भीख।
मागन से मरना भला यह सत गुरु की सीख॥

किं गहनं स्त्री चरितं कश्चतुरो योन खण्डित स्तेन
किं दारिद्र्य मसन्तोष एव किं लाघव याच्ञा।१०।

१९ प्र०—गहन (मुश्किल) क्या है ?

उ०—स्त्रियों का चरित्र जानना।

१९ प्र०—होशियार कौन है।

उ०—जोकि स्त्री के चरित्र से ठगा नहीं गया।

२० प्र०—दरिद्रता क्या है ?

उ०—असन्तोष।

नहिं धन धन है परमधन, तोषहिं कहैं प्रवीन।
बिन सन्ताप कुबेर हू दारिद दीन मलीन॥
गोधन, गजधन, बाजिधन और रतनधन खान।
जो आवे सन्तोष धन सब धन धूरि-समान॥

२१ प्र०—क्षुद्रता क्या है ?

उ०—मांगना।

वास्तव में स्त्रियों का चरित्र गहन है उसको देवता भी नहीं जान सकते।

स्त्रियाश्चरित्रं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः।

स्त्रियों के चरित्र को देवता भी नहीं जान सकते तो मनुष्य क्या जानेंगे ?

स्त्री-चरित्र—

अन्य प्रियालाप पथ नयन्ते किञ्चित् कटाक्षैरपर स्पृशाति।
अन्यहृदा कम्पन मन्यते प्रियोपिता चञ्चल चित्त वृत्तिम्॥

किसी से प्यारी २ बातें करती है, किसी को मन्द कटाक्ष से स्पर्श करती है, हृदय से किसी और को ही चाहती है। किसी से गुप्त वार्तालाप करती है ऐसी स्त्रिया के चरित्र को धिक्कार है।

किं जीवित मनवद्य किं जाड्य पाटवेऽप्यनभ्यास ।
कोजागृति विवेकी कानिद्रा मूढता जन्तो ॥११॥

प्रश्न०—वास्तविक जीवन क्या है?

उ०—अनिन्दित।

प्र०—मूर्खता क्या है?

उ०—निपुण होन पर भी अभ्यास न करना।

प्र०—जागता कौन है?

उ०—विवेकी।

प्र०—नींद क्या है?

उ०—प्राणी की मूर्खता।

नलिनीदल गत जल लव तरल
किं यौवन धन मथायु ।
के शशधर कर निकरानुकारिण —
सज्जनाएव ॥१२॥

प्र०—कमलिनी के पत्ते के ऊपर पड़े हुए जल के समान चञ्चल कौन है?

उ०—युवावस्था, धन और आयु।

२० प्र०—चन्द्रमा की किरण समूह के समान विमल कौन हैं?

उ०—सज्जन।

इस श्लोक का भाव यह है कि जैसे कमलिनी के पत्ते के ऊपर पड़ा हुआ पानी चञ्चल होता है अर्थात् क्षण में तो मोती के समान मनोहर प्रतीत होता है और क्षण में ही जरा वायु चली कि जमीन पर गिरकर मिट्टी के रूप में परिणत होगया, ढूंढा करो तो भी नहीं मिलता।

इसी तरह युवावस्था, दौलत और आयु क्षणनश्वर हैं।

दौलत पाय न कीजिये, सपनेहु में अभिमान।
चंचल जल दिन चारि को, ठौर न रहत निदान॥

और भी—

धन अरु जोबन को गरब कबहू करिये नाहिं।
देखते ही मिट जात है, ज्यों बादर की छाहिं।

अतएव मनुष्य को धन और युवावस्था का कभी अभिमान न करना चाहिये।

हमेशा के लिये रहना नहीं इस दारेफानी में।
कुछ अच्छा काम करलो चार दिन की जिन्दगानी में॥

सज्जनजन चन्द्रमा के समान होते हैं अर्थात् उनके हृदय चन्द्रमा की स्वच्छ किरणों के समान शुद्ध होते हैं। उन्हीं सज्जनों से पृथ्वी "रत्नवती" कहाती है।

नास्त्यसत्यभाषितं यस्य नास्ति भंगो रणागमात् ।
नास्तीति याचके नास्तितेन रत्नवतीक्षिति ॥

जो झूठ बोलना नहीं जानते, लड़ाई में पीठ नहीं दिखाते, भिखारी को "नहीं है" ऐसा वचन नहीं कहते, उन्हीं से पृथ्वी का "वसुन्धरा" कहा जाता है।

जिन मनुष्यों की जीवन चर्या उक्त प्रकार की होगी, वही शुद्ध हृदय हैं और उन्हीं को सज्जन कहा जाता है।

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् ।

मन, वाणी, कर्म में महात्माओं के विभिन्नता नहीं रहती, इसीलिये इनकी उपमा चन्द्र किरणों के समान दी है।

कोनरक परवशता किं सौख्य सर्वसंग विरतिर्या।
किं सत्यभूतहित किंप्रेय, प्राणिनामसव ॥ १३ ॥

प्र०—नरक क्या है?
उ०—पराधीनता।
प्र०—सुख क्या है?
उ०—सारे झंझटों से छूटना।

३ प्र०—सत्य क्या है ?

उ०—प्राणियों पर दया।

३१ प्र०—प्राणियों को क्या प्रिय है ?

उ०—प्राण—

वक्तव्य- नरक नाम है, दुःख का शब्द निरुक्तिकारों ने कहा है।

नरक न्यरक नीचैर्गं मनामीति ।

दुर्गति की प्राप्ति होना ही नरक है, यह नरक पराधीनता में मिलता है इसलिये पराधीनता के समान कोई दुःख नहीं यह सिद्ध हुआ।

सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् ।
एतत् विद्यात्समासेन लक्षणं सुख दुःख यो. ॥

पराधीनता में प्राप्त हुआ सुख भी दुःख ही है, और जो स्वाधीनता है वही सुख है।

इसी भाव को तुलसीदास शब्दान्तर में वर्णन करते हैं —

पराधीन सपनेहु सुख नाहीं ।
कर विचार देखहु मन माहीं ॥

और भी—

पराधीनता दुख महा, सुख जग में स्वाधीन।
सुखी रहत शुक बन विषे, कनक पींजरे दीन॥

एक कवि की भावना—

चाहें दुखों को हम सहें सुख दूर ही होते रहें।
नीतिज्ञ निन्दा ही करें चाहें भला हमको कहें॥
धन राशि आवे या जुदा हो किन्तु घबरावें नहीं।
स्वाधीनता को बेच अरि की जूतियां खावें नहीं॥*

मिले खुश्क रोटी जो आज़ाद हो कर।
गुलामी की पूड़ी व हलुए से बेहतर॥

किं दानमनाकांक्षं किं मित्रं यन्निवर्तयति पापात्।
कोऽलंकारः शीलं किं वाचां मण्डनं सत्यम्॥१४॥

प्र०—दान कौनसा है?
उ०—जो अनाकांक्ष (निःस्वार्थ) हो।

प्र०—मित्र कौन है?
उ०—जो पाप से हटावे।

३४ प्र०—गहना क्या है ?

उ०—शील।

३५ प्र०—वाणी का भूषण क्या है ?

उ०—सत्य।

भाव—जिस दान में स्वार्थ भाव है, शास्त्रकारों ने उसे निरर्थक बतलाया है, दान उसी का नाम है जो जिसमें रत्ती मात्र स्वार्थ न हो। मित्र वही है जो पापात्मा बनने से हटावे।

मित्र के लक्षण—

पापान्निवारयति, योजयते हिताय,
गुह्यन्च गूहति गुणान प्रकटी करोति।
आपद्गतन्चनजहाति ददातिकाले,
सन्मित्रलक्षणमिद प्रवदन्तिसन्त ।

अर्थ—पाप कार्यों से हटावे, हितयुक्त कार्य में लगावे, छिपाने लायक बात को छिपावे, गुणों को प्रकट करे, आपत्ति में साथ न छोड़े, समय पर रुपया पैसा आदि से सहायता करे वही सच्चा मित्र है।

हरति कुल कलन्क लुम्पते पाप पङ्क ।
सुकृतमुपचिनोति श्लाघ्यतामातनोति ॥

नमयति सुरवर्गं हन्ति दुर्गोपसर्गं ।
रचयति शुचि शीलं स्वर्गमोक्षौ सलीलम्॥

(कवि पद्मानन्द)

सोने चांदी के भूषण नकली भूषण हैं, असली भूषण शील है।

शील से मनुष्य कुलगत कलंक को दूर करता है, पाप को नाश करता है, पुण्य की वृद्धि करता है, विघ्न बाधाओं से रहित हो लोगों में प्रशंसित होता है एवं स्वर्ग और मोक्ष को प्राप्त करता है।

वाणी का भूषण है सत्य, राजा भर्तृहरि कहते हैं —

केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्वला
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालङ्कृता मूर्धजा।
वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते।
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥

कुण्डल पहिनना, चन्द्रमा के समान उज्वल (सफेद) हार, स्नान, चन्दन, फूल तथा मुकुट पहिनकर मनुष्य की वह शोभा नहीं होती जो कि सत्यवान् पुरुष की होती है। क्योंकि उपर्युक्त गहने तो नष्ट हो जाते हैं और सत्यरूप गहना क्षणभंगुर नहीं।

किमनर्थफल मान समसगत कासुखावहा मैत्री।
सर्व व्यसन विनाशे कोदक्ष सर्वथा त्याग ॥ १५ ॥

प्र०—बुरे कामों का फल क्या है ?

उ०—मन की मलीनता।

प्र०—सुख देने वाली क्या चीज है ?

उ०—मित्रता।

प्र०—समस्त व्यसनों के नाश करने मे चतुर कौन है ?

उ०—जिसने सब कुछ त्याग दिया।

कोऽन्धोयोऽकार्यरत को बधिरो य श्रृयोतिनाहितानि।
को मूकोय काले प्रियाणि वक्तु न जानाति ॥ १६ ॥

प्र०—अन्धा कौन है ?

उ०—जो अयोग्य काम करता है।

प्र०—बधिर (बैरा) कौन है ?

उ०—जो आत्महित के वाक्य नहीं सुनता।

प्र०—गूंगा कौन है ?

उ०—जो समय पर प्रिय वचन नहीं बोल सकता।

किंमरणं मूर्खत्वं किंचानर्घ्यं यदवसरे दत्तम्।
आमरणात् किं शल्यं प्रच्छन्नं यत्कृतमकार्यम् ॥१७॥

४- प्र०—मरण क्या है ?

उ०—मूर्खता।

५) प्र०—अमूल्य वस्तु क्या है ?

उ०—जो समय पर दी गई हो।

४- प्र०—मरण पर्यन्त शल्य (कीली) क्या है ?

उ०—जो बुरा काम छिपा हुआ है।

किसी मनुष्य ने अगर कोई बुरा काम कर लिया तो उसे वह सदा खटकता रहता है। जैसे किसी मनुष्य की छाती पर अगर कीली ठोक दी जाय तो वह सदा घबराता रहता है, ऐसे ही जो मनुष्य दुष्कर्म कर लेता है और प्रकट नहीं होने देता वह सदा घबराता ही रहता है।

कुत्र विधेयो यत्नो विद्याभ्यासे सदौषधे दाने।
अवधीरणा क्व कार्या खलु परयोषित्परधनेषु ॥१८॥

१- प्र०—परिश्रम कहां करना चाहिये ?

उ०—विद्या पढ़ने, औषधि और दानमें।

४६ प्र०—उपेक्षा बुद्धि कहां रखनी चाहिये ?

उ०—दुष्ट, पराई स्त्री और पराये धन में ।

अहर्निश मनुचिन्त्या संसारा सारतानच प्रमदा ।
काप्रेयसी विधेया करुणा दाक्षिण्यमपि मैत्री ॥१६॥

४७ प्र०—दिन रात क्या विचारते रहना चाहिये ?

उ०—ससार की असारता, स्त्री को नहीं ।

४८ प्र०—अति प्यारी किसको बनाना चाहिये ?

उ०—कृपा, चतुरता और मित्रता को ।

कण्ठगतैरप्यसुभि कस्यात्मानो समर्प्यते जातु ।
मूर्खस्य विषादस्य च गर्वस्य तथा कृतघ्नस्य ॥२०॥

४९ प्र०—प्राणों के कण्ठ तक आने पर भी किसका आत्मा नहीं दिया जाता, अर्थात् "मौत" के मुख तक पहुचने पर भी कौन पुरुष अपना आत्मा को समर्पित नहीं करते ?

उ०—मूर्ख, दुष्टात्मा, अभिमानी और कृतघ्न ।

साराश यह है कि उपर्युक्त चार प्रकार के पुरुष मृत्यु पर्यन्त महात्माओं के वचन का आश्रय नहीं लेते ।

मूर्ख के विषय में भर्तृहरि राजा कहते हैं —

प्रसह्यमणि मुद्धरेन्मकर वक्त्र दंष्ट्राकुरात्—
समुद्रमपि सन्तरेत्प्रचलदूर्मिमाला कुलम्।
कदाचिदपि पर्यटन्छश विषाणमासादये—
न्नतुप्रीतिनिविष्ट मूर्खजनचित्त माराधयेत् ।

अर्थ—बड़ा जोर मार कर मगर के मुँह की दाढ़ों में से मणि निकाल ले।

जिस समुद्र में चञ्चल लहरें लहरा रही हैं ऐसे समुद्र को भी शायद मनुष्य तैर जाय, और शायद कभी घूमते फिरते शश (ससा) के भी सींग मिल जाय किन्तु मूर्ख जन का चित्त कभी नहीं सुधर सकता।

तुलसीदास भी कहते हैं —

नीच निचाइ नहि तजै ज्यों पावहि सतसंग।
तुलसी चन्दन विटप बसि विष ना तजत भुजंग॥

ऐसे ही अन्य तरह के पुरुषों की अवस्था जाननी।

कः पूज्य सद्वृत्त कमधनमाचक्षते चालित वृत्तम्।
केनजित जगदेतत्सत्य तितिक्षा वतापुंसा ॥२१॥

प्र०—कौन पूजनीय है ?

उ०—अच्छे चालचलन वाला पुरुष।

प्र० —निर्धन किसे कहते हैं ?

उ०—चञ्चल (खराब) चालचलन वाले को।

प्र०—इस दुनिया को किसने जीता ?

उ०—सत्यवादी या सहनशील पुरुष ने।

जिस पुरुष का चालचलन अच्छा है अर्थात् धार्मिक है वही (पुरुष) सदाचारी है, चाहे वह कोई भी व्यक्ति हो। सदाचारी ही ईश्वर का सच्चा भक्त है।

आचार प्रथमो धर्म ।

सदाचार ही महान् धर्म है। जो दुराचारी, अगर वह धनी भी है तो बुरी सगति वश हस्तगत द्रव्य को बर्बाद कर देगा।

सत्य और सहनशीलता अमोघ अस्त्र हैं, इन्हीं से यह जगत् भी स्थिर है।

सत्येन धार्यते पृथ्वी, सत्येन रवि चन्द्रमा ।

सत्य से जमीन, सूर्य, चांद स्थित हैं।

क्षमाखड्ग करे यस्य दुर्जना किं करिष्यति ।

जिस पुरुष के हाथ (पास) में क्षमा रूप तलवार है उसका दुर्जन क्या करेगा ?

कस्मैनम सुरैरपि सुतरा क्रियते दया प्रधानाय।
कस्मादुद्विजितव्य ससारारण्यत सुधिया ॥२२॥

५३ प्र०—देवता भी किसकी वन्दना करते हैं ?

उ०—दयालु की।

५४ प्र०—विद्वान् को किसस डरना चाहिये ?

उ०—ससार रूप जगल से।

जैसे जगल से मनुष्य को डर लगता है, क्योंकि उसमें शेर आदि भयानक जीवों का वास है, ऐसे ही विद्वान को ससार रूप जगल में डरना चाहिये, इस जगल में भी काम क्रोधादि जीव वास करते हैं।

कस्यवशे प्राणिगण सत्यप्रिय भाषिणो विनीतस्य।
क्वस्थातव्य न्याय्येपथि दृष्टादृष्टार्थ लाभाय ॥ २३ ॥

५५ प्र०—सासारिक जीव किसके आधीन हैं ?

उ०—सत्यवादी, प्रियवादी और विनीत (सभ्य या शिक्षित) के।

तुलसी मीठे बचन ते सुख उपजत चहु ओर।
वशीकरण एक मन्त्र है तज दे वचन कठोर ॥

५६ प्र०—न जाने हुए और जाने हुए को प्राप्त करने के लिये कहा ठहरना चाहिये ?

उ०—उचित मार्ग पर।

भावार्थ—मनुष्य को सत्य मार्ग का ही अनुभव करना चाहिए।

कदाचित् कोइ पुरुष कहने लगे कि "हम संसार में आये, हमने नहीं जाना कि मांस में क्या स्वाद होताहै? इसका भी अनुभव करें" यह बात अनुचित है, इस विचार का सर्वथा त्याग करना उचित है, हाँ यह अवश्य है कि अगर किसी ने कोई शास्त्र नहीं देखा तो उसका अध्ययन करले इसी की आज्ञा शास्त्रकार देते हैं "न्याय्ये वर्त्मनि"

विद्युद्विलसितं चपलं किं दुर्जनसंगतं युवतयश्च ।
कुलशैलनिष्प्रकम्पाः के कलिकालेऽपि सत्पुरुषाः ॥२४॥

५७ प्र०—बिजली के समान चञ्चल क्या है ?

उ०—खराब मनुष्यों की संगति और स्त्रियों।

५८ प्र०—कुल पर्वतों † के समान अचल कौन है ?

उ०—सज्जन पुरुष, जो कि कलियुग में भी 'सत्य धर्म परायण' हैं।

---

† मेरु, सुमेरु, कैलाश आदि बड़े २ पर्वतों को कुल पर्वत कहते हैं।

किं शौच्यं कार्पण्यं सति विभवे किं प्रशस्यं औदार्यम्
तनुतरवित्तस्य तथा प्रभविष्णोर्यत्सहिष्णुत्वम् ॥२१॥

प्र०—शोचनीय क्या है ?

उ०—कृपणता।

प्र०—प्रशंसनीय क्या है ?

उ०—उदारता।

प्र०—बलवान और धनी कब प्रशंसनीय हैं ?

उ०—जब कि उनमें सहनशीलता हो।

प्रश्न १ का भावार्थ—

जो वस्तु शोचनीय (सोचने लायक) होता है, वही दुःख दायक है। इसलिये कृपणता (कन्जूसी) सोचने लायक है अतः इसका त्याग करना उचित है और प्रशंसनीय उदारता का ग्रहण।

कबीर की मनोहर उक्ति —

खाय पकाय लुटाय दे करले अपना काम।
चलती बिरिया रे नरा संग न चले छदाम॥
सो पापन का मूल है एक रुपइया रोक।
साधु होय संग्रह करे मिटै न संशय सोक॥

इस शक्ति पर कजूस ध्यान दें

चिन्तामणिरिवदुर्लभमिह किंकथयामिननु चतुर्भद्रम्।
किंतद्वदन्ति भूयो विधूत तमसो विशेषेण ॥ २६ ॥

६८ प्र०—चिन्तामणि के समान दुर्लभ क्या है ?

उ० चतुर्भद्र (दान, ज्ञान, अभिमान त्याग और सहनशीलता) जिसका वर्णन मैं (कवि विमल) आगे करूंगा।

६९ प्र०—ज्ञानीजन उसके विषय में क्या आज्ञा देते हैं ?

उ०—चार २ विशेषता से उस (चतुर्भद्र) को उपयोग में लाना।

दानं प्रिय वाक्सहितं ज्ञानमगर्वं क्षमान्वितम् शौर्यम्।
त्याग सहितञ्च वित्तं दुर्लभमेतच्चतुर्भद्रम् ॥ २७ ॥

अर्थ—मधुर वाक्य बोलते हुए दान देना 'निराभिमान हो ज्ञानी होना, पराक्रमी होते हुए भी सहनशील होना'। धन रहते हुए भी उसमें ममत्व न करना। दुनिया में ये चार बातें दुर्लभ हैं।

दाम के विषय में—

धन दीये धन ना घटे नदी न घटे नीर।
अपनी आँखों देखला यों कथि गए कबीर॥

लेकिन दान देते समय गाली आदि कुवाक्यों का प्रयोग न करना चाहिये। इसी तरह ज्ञानी होते हुए भी अभिमान न करना अर्थात मैं विद्वान हूं जिसे संस्कृत में "पण्डित मान्य" कहते हैं ऐसा वाक्य अपने मुंह से न निकालना या मनमें भी कभी ऐसे भावों का समावेश न होना चाहिये।

अगर मनुष्य बलवान है और फिर भी सहनशील है वही मनुष्य वास्तविक बलवान है।

एक असाधारण उपदेश—

दुर्बल को न सताइये जाकी ऊंची हाय।
मुई खाल की साम तैं सार भसम ह्वै जाय॥
गरीब को मत सताना गरीब रो देगा।
अगर भगवान सुन लेगा तो गारत ही कर देगा॥

कोदेवो वीततमा, कः सुगुरुः शुद्धमार्ग संभाषी।
किं परम विज्ञानं स्वकीय गुणदोष विज्ञानम् ॥२८॥

६४ प्र०—देव कौन है ?

उ०—वीतराग।

६५ प्र०—गुरु कौन है ?

उ०—अच्छा रास्ता बताने वाला।

६६ प्र०—महान ज्ञान क्या है ?

उ०—अवगुण और गुणों की पहिचान।

इति कण्ठगता विमला प्रश्नोत्तररत्नमालिकायेषाम्।
ते मुक्ताभरणा अपि विभान्ति विद्वत्समाजेषु ॥२९॥

अर्थ—जिन मनुष्यों को यह 'प्रश्नोत्तर रत्नमाला' कण्ठ (याद) है। वे बिना भूषण पहिने भी विद्वानों की सभा में शोभित होते हैं।

रचिता मितपट गुरुणा विमलाविमलेन रत्नमालेव।
प्रश्नोत्तर रत्नमालेयं कण्ठगता कं न भूषयति ॥३०॥

अर्थ—सितपट नामक आचार्य के शिष्य विमल मुनि* की बनाई हुई "प्रश्नोत्तर रत्नमाला" को याद कर कौन पुरुष शोभित नहीं होता? अर्थात् सब होते हैं।



* विमल मुनि का नाम श्रावक दशा में 'राजा अमोघवर्ष" था।